ज़िन्दगी की जीत में यक़ीन की एक हार
अर्चना की आत्महत्या से उठे जलते सवाल

अभिनव

"तू ज़िन्दा है, तू जिन्दगी की जीत में यकीन कर...

आज घुप्प अंधेरा है दिमाग सुन्न है पर ... मुझे कोई चाहिए जिससे मैं अपनी जिन्दगी की सारी समस्याओं को ज्यों का त्यों बता सकूं क्योंकि सब पूछते हैं, क्या है, क्यों उदास हो? और मैं लगातार टालती हूं अपना निर्णय है इसलिए ऐसी बदतर स्थिति बताने में लगता है अपनी ही हार है पर है तो। अक्सर निर्णयों के विभिन्न प्रभाव बाद में नजर आते हैं। पर एक आराम की जिन्दगी के लिए समझौता नहीं। या तो पूरी मौत या पूरी जिन्दगी। आधा-अधूरा कुछ नहीं जिस दिन लगेगा बहुत थक गयी उस दिन बस बहुत आराम का रास्ता चुन लूंगी, फिलहाल हिम्मत है थकने का।"

यह अर्चना की डायरी के कुछ पन्ने हैं जिसने वर्ष 2002 के पटाक्षेप के साथ ही, जब नये वर्ष की भोर की किरनें फूट रही थीं, अपने हाथों अपने जीवन का पटाक्षेप कर लिया। नहीं, अर्चना कोई निराशावादी लड़की नहीं थी उसकी दोस्तों के मुताबिक, कभी वह साहस और उमंग से लबरेज एक जिन्दादिल लड़की हुआ करती थी। ब्राह्मण परिवार की जातिगत रूढ़ियों से बगावत करके उसने एक कथित प्रगतिशील दलित बुद्धिजीवी सूरज प्रकाश से शादी की थी। सूरज प्रकाश दिल्ली विश्वविद्यालय के श्री वेंकटेश्वर कालेज में प्रवक्ता है। लेकिन अर्चना कोई पति पर अश्रित घरेलू औरत नहीं थी। दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की शोध छात्रा होने के साथ ही वह खजूरी (पूर्वी दिल्ली) के सरकारी स्कूल में स्थायी शिक्षिका भी थी। प्रबुद्ध, साहसी और आर्थिक रूप से स्वावलम्बी होने के बावजूद, तथा शादी के बाद जीवन में व्याप्त, दिमाग सुन्न कर देने वाले घुप्प अंधेरे में भी "जिन्दगी की जीत में यकीन" करने के बावजूद, अर्चना हार गयी। एक पूरी जिन्दगी के लिए लड़ते हुए थककर वह एक पूरी मौत तक जा पहुंची। अर्चना की मौत दरअसल पुरुष वर्चस्व के दमघोंटू माहौल में उन तमाम स्वप्नों-आकांक्षाओं-कामनाओं की एक प्रातिनिधिक मौत थी, जिन्हें पाने की कोशिश में मध्यवर्ग की तमाम जागरूक और स्वावलम्बी स्त्रियां अलग-अलग, अकेले-अकेले जूझती हैं और फिर थक-हारकर मौत या मौत जैसी जिन्दगी चुन लेती है। अर्चना की आत्महत्या हमारे पुरुषवर्चस्ववादी समाज के ढांचे पर अधिक गहन गंभीर प्रश्नचिन्ह उठाने के साथ ही बौद्धिक जगत के उन बहुतेरे प्रगतिशील बात-बहादुरों को भी कठघरे में खड़ा करने का काम करती है जो सामाजिक मुक्ति नारी मुक्ति और दलित मुक्ति पर व्याख्यानों-आख्यानों-प्रत्याख्यानों का तूमार बांध देते हैं, लेकिन निजी जीवन में महज तरक्की की सीढ़िया चढ़नें को आतुर एक सुविधाजीवी होते हैं और अपने घरों में स्त्रियों की नजरों में एक आततायी पुरुष-सत्ता का प्रतिनिधि होने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होते।

अर्चना ने जातिगत बंधनों को तोड़कर, विद्रोह करके सूरज प्रकाश से शादी की। शादी के बाद ही कथित प्रगतिशील युवा दलित बुद्धिजीवी का असली चेहरा सामने आया-बोहेमियन जीवन, शराबखोरी, अर्चना से घरेलू गुलामी की हर कसौटी पर पूरी-पूरी खरी उतरने की अपेक्षा और ऐसा न होने पर लगातार गाली-गलौज व मानसिक शारीरिक उत्पीड़न। अर्चना इस सारी नर्क कथा को बस डायरी के पन्नों पर दर्ज करती रही। यह डायरी उसकी एक अन्तरंग सहेली के पास है और ये पन्ने ही सूरज प्रकाश के हत्यारे चेहरे को उघाड़ने वाले एकमात्र साक्ष्य हैं। अर्चना स्थिति में सुधार के लिए जूझती रही। उसकी दारुण यंत्रणा से अंतरंग सहेलियां पूरी तरह अवगत नहीं थी। बस कुछ एक को हल्का सा अहसास था। किसी को बताने में अर्चना को ऐसा लगता था कि यह स्वयं उसकी हार होगी क्योंकि उसने शादी स्वयं, विद्रोह करके की है। 31 जनवरी 2002 की आधी रात को एक पार्टी से लौटकर अर्चना को घर छोड़ने के बाद सूरज प्रकाश एक दूसरी पार्टी में चला गया। चार बजे भोर में अर्चना ने फंदा लगाकर आत्महत्या कर ली।

सूरज प्रकाश अभी भी फरार है और संभवत: दिल्ली में ही यहां-वहां छिपे रहकर अपनी जमानत और केस को रफा दफा करवाने की कोशिशें कर रहा है। अर्चना की मित्रों की काफी दौड़धूप के बाद सूरज प्रकाश के विरुद्ध आत्महत्या के लिए पत्नी को बाध्य करने का मामला घटना के दस दिनों बाद, दस जनवरी को दर्ज हो सका। मीडिया ने भी, रहस्यमय ढंग से इस घटना को ब्लैकआउट किया। 17 जनवरी को पहली बार यह घटना अखबारों में प्रकाशित हो सकी। अर्चना की डायरी सूरज प्रकाश के खिलाफ एक स्पष्ट प्रमाण है, लेकिन विश्वविद्यालय प्रशासन ने इन पंक्तियों के लिखे जाने तक (यानी 22 जनवरी तक) उसे निलम्बित भी नहीं किया है। यह समाज और प्रशासन के पुरुषवर्चस्ववादी नजरिए का ही द्योतक है। अधिकांश लोग तो पुरुष के मन मुताबिक अपने को न ढाल पाने वाली स्त्री को सजा के काबिल ही समझते हैं। और यह सजा मौत भी हो तो कोई अधिक नहीं।

विश्वविद्यालय के प्रबुद्ध शिक्षक छात्र समुदाय में इस घटना को लेकर तीव्र आक्रोश है और सूरज प्रकाश के विरुद्ध कार्रवाई के लिए संगठित दबाव बनाने की तैयारियां भी जारी है। लेकिन यहां भी कई सवाल उठते हैं। अर्चना की मृत्यु के करीब एक पखवाड़े बाद कैम्पस में कुछ सुगबुगाहट की शुरुआत हुई। एक बुजुर्ग प्राध्यापक के अनुसार, आज के पन्द्रह वर्षों पहले यदि ऐसी कोई घटना घटती तो शिक्षकों-छात्रों के बीच आन्दोलन जैसा माहौल होता और छात्राएं सड़कों पर आ जातीं। दरअसल पूरे समाज के साथ ही कैम्पसों में भी प्रतिगामी शक्तियों का जो वर्चस्व स्थापित हुआ है और प्रतिक्रिया का जो आम माहौल बना है, वही इस ठण्डी तटस्थता और मुर्दानगी की जड़ में है। इस माहौल को श्रमसाध्य कोशिशों से ही बदला जा सकता है और यह समय की मांग है। दिल्ली विश्वविद्यालय के परिवेश का हाल में कुलीनीकरण हुआ है। "खुलेपन" की बयार ने निजी बुर्जुआ स्वच्छन्दता के आग्रहों और समाज विमुख आत्मग्रस्ता का घटाटोप निर्मित किया है। जिसमें आम छात्र-छात्राओं की जनतांत्रिक चेतना का तेजी से क्षरण हुआ है। इस ठण्डी तटस्थता के विरुद्ध संघर्ष छात्र आन्दोलन, स्त्री आन्दोलन, जनवादी अधिकार आन्दोलन और सांस्कृतिक आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण एजेण्डा है। इससे अब और अधिक मुंह नहीं चुराया जा सकता।

साथ ही, सोचने के लिए कुछ और भी अहम सवाल है। सूरज प्रकाश स्वयं वामपंथी विचारों को मानने वाला एक दलित बुद्धिजीवी था जो छात्र जीवन से ही प्रगतिशील वाम और दलितवादी सर्किलों में डोलता रहता था। वह उन्हीं अराजक अकर्मक नकली प्रगतिशीलों में से एक था जो अपने विचारों को सामाजिक प्रतिष्ठा और तरक्की की सीढ़ियां बनाते रहते हैं, सेमिनारों से लेकर काफी हाउसों तक बहसबाजी करते रहते हैं और फिर शराब के प्यालों में अपना "तनाव" घुलाते-डुबाते रहते हैं जो नकली वामपंथी अपनी अकर्मक विमर्शवादी राजनीति से ऐसे चरित्रों को बल प्रदान करते रहते हैं, सूरज प्रकाश का 'एक्सपोजर' प्रकारान्तर से उनका भी 'एक्सपोजर' है।

ऐसे दलित बुद्धिजीवियों की कमी नहीं है जो दलित उत्पीड़न की गरमागरम बातें करते हैं लेकिन लेक्चरर, अफसर या पत्रकार बनकर अभिजन समाज में शामिल होने के बाद अपने निजी और पारिवारिक जीवन में उन तमाम प्रतिगामी मूल्यों एवं विलासी जीवन शैली को अपना लेते हैं जो पुराने अभिजनों की विशिष्टता थी। स्त्रियों के प्रति भी वे उतने अत्याचारी होते हैं एक प्रसिद्ध मराठी दलित लेखक की पत्नी ने भी अपनी आत्मकथा में इस विडम्बना का विश्वसनीय चित्र प्रस्तुत किया है। हाल के वर्षों में दलित मुक्ति के जो नकली वामपंथी, एन.जी.ओ. पैरोकार पैदा हुए हैं, वे भी ऐसे ही दलित अभिजनों से ही गलबहियां डाले चल रहे हैं इन सभी को सिर्फ गरमागरम लोकरंजक बातें करनी हैं, आम दलितों की 90 फीसदी आबादी तक न तो इनकी पहुंच है न ही उनकी मुक्ति की कोई वास्तविक परियोजना। ये सभी लोग दलित मुक्ति के प्रश्न को घुमाफिराकर वर्ग संघर्ष से स्वतंत्र स्वायत्त बनाकर प्रस्तुत करते हैं। दलित बुद्धिजीवी अभिजन समाज के असली वर्ग चरित्र की यह अनदेखी आज दलित मुक्ति, स्त्री मुक्ति और सभी शोषितों की मुक्ति की व्यापक परियोजना के विखण्डन की एक साजिश के रूप में सामने आ रही है। सूरज प्रकाश जैसे स्त्रीहन्ता पतित चरित्र इसी घृणित महानाटक के प्रतिनिधि पात्र हैं। अर्चना की आत्महत्या के कारणों की शिनाख्त ऐसे चरित्रों के असली चेहरे की शिनाख्त के रूप में भी होनी चाहिए। लफ्फाजियों के घटाटोप में आज यह पड़ताल बहुत जरूरी है कि स्त्री मुक्ति और सामाजिक मुक्ति के बारे में काफी गरमागरम बातें करने वाले लोग वस्तुतः कैसा निजी और पारिवारिक जीवन जीते हैं। सूरज प्रकाश जैसे प्रगतिशील मुखौटा लगाये आतताइयों और कैरियरवादियों को पहचानना होगा, तभी स्त्रियों की आधी आबादी और आम लोगों का विश्वास सही मायने में जीता जा सकता है।

अर्चना की आत्महत्या से जुड़े कुछ और अहम पहलू हैं। अक्सर कुछ लोग यह कहते पाये जाते हैं कि स्त्रियां यदि आर्थिक रूप से स्वावलम्बी हों, और वे विद्रोह का साहस करें तो अपनी आजादी हासिल कर सकती हैं। अर्चना आर्थिक रूप से स्वावलम्बी थी, उसने विद्रोह करके जातिबाहर शादी की और पति के अत्याचारों के विरुद्ध भी घुटने नहीं टेके, पर अन्ततः वह हिम्मत हार गयी। क्यों? उसे लगा कि पुरुष स्वामित्ववाद के सर्वव्याप्त सामाजिक परिवेश में वह अकेली है। अर्चना की आत्महत्या एक एकाकी संघर्ष की पराजय थी। यह एक अकेले विद्रोह का त्रासद अन्त था। यह कोई एक अकेली घटना नहीं है। यह पुरुष वर्चस्ववादी सामाजिक संरचना में स्त्री की नियति का महज एक उदाहरण है। ऐसी घटनाएं यदि वास्तव में हमारी चेतना को झकझोरती हैं तो तात्कालिक जिम्मेदारियों के निर्वाह के साथ ही दूरगामी तौर पर हमें उस सामाजिक ढांचे को बदलने की परियोजना के बारे में सोचना ही होगा जिसमें स्त्री हर स्तर पर पुरुष उत्पीड़न की शिकार है। हर वर्ग समाज की तरह वर्तमान पूंजीवादी समाज में भी परिवार एवं विवाह की संस्थाएं ही स्त्री उत्पीड़क संस्थाएं हैं। समाज में कुछ मर्दों के उदार एवं प्रगतिशील होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। सवाल पूरे सामाजिक ढांचे और प्रभुत्वशील मूल्यों-संस्थाओं का है। विवाह एकनिष्ठ प्यार का आदर्श रूप नहीं, बल्कि स्त्री-उत्पीड़न का उपकरण है, एक संस्थाबद्ध वेश्यावृत्ति है। स्त्री पुरुष के बीच वास्तविक-एकनिष्ठ प्यार केवल उनके बीच की समानता पर ही आधारित हो सकता है, और इसके लिए एक समूतामूलक सामाजिक ढांचे का होना जरूरी है। यह वैज्ञानिक सच्चाई किसी के बद्धमूल संस्कारों को आहत कर सकती है, लेकिन सच्चाई तो सच्चाई है।

अर्चना हठपूर्वक, अकेले, अपनी बेहतर जिन्दगी के लिए जूझती रही। वह खुशहाल पारिवारिक जीवन के मृगमरीचिका के पीछे भागती रही। वह साहसी विद्रोही थी लेकिन पराजित हुई। यह पराजय अप्रत्याशित नहीं थी। अर्चना को लोक लाज की चिन्ता थी, यह भय था कि सामाजिक बंधन तोड़कर किये गये प्रेम विवाह की विफलता उसकी हार होगी, लोग उस पर हंसेंगे। काश कि अर्चना एक झिझक से मुक्त होकर अपनी लड़ाई को खुलेआम सड़क पर लाने का साहस जुटा पाती कि तब वह अकेले नहीं होती। काश, वह जान पाती कि ऐसा करके न सिर्फ वह अपनी लड़ाई को एक व्यापक लड़ाई से जोड़ देती और जीने का एक मकसद पा जाती, बल्कि वर्तमान और भविष्य की अन्य तमाम अर्चनाओं को अपने अपने तर्क के अन्धेरे तलघरों से बाहर निकलने की राह भी दिखा देती। नहीं, अर्चना को फन्दा अपने गले में नहीं डालना चाहिए था बल्कि अपनी जैसी स्त्रियों के साथ जुटमिलकर पुरुष आधिपत्यवाद के गले में डालने के लिए लोहे का एक बड़ा और मजबूत फन्दा तैयार करने के काम में भिड़ जाना चाहिए था।

(22 जनवरी 2003) ●

घोषणा पत्र: प्रपत्र-1

पत्रिका का नाम	- आह्वान कैम्पस टाइम्स
आवर्तिता	- त्रैमासिक
भाषा	- हिन्दी
प्रकाशन स्थान	- गोरखपुर
प्रकाशक/स्वामी का नाम	- आदेश सिंह
राष्ट्रीयता	- भारतीय
पता	- 'संस्कृति कुटीर' कल्याणपुर, गोरखपुर
मुद्रक का नाम	- आदेश सिंह
राष्ट्रीयता	- भारतीय
पता	- 'संस्कृति कुटीर' कल्याणपुर, गोरखपुर
सम्पादक का नाम	- अभिनव
राष्ट्रीयता	- भारतीय
पता	- 'संस्कृति कुटीर' कल्याणपुर, गोरखपुर
मुद्रणालय का नाम	- आफसेट प्रेस इलाहीबाग, गोरखपुर

मैं आदेश सिंह, यह घोषणा करता हूं कि उपर्युक्त तथ्य मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार सत्य हैं।

हस्ताक्षर
आदेश सिंह
(प्रकाशक/मुद्रक/स्वामी)